उसकी आस का संसार
नूतन अंकुरों का
उग रहा अंबार !
.
सूखे वृक्ष के आ पास
बहती वायु कुछ रुक
कह रही संदेश ऐसा
जो नया,
बिलकुल नया है !
सुन जिसे खग डाल का
अब चोंच अपनी खोलने को
हो रहा आतुर,
प्रफुल्लित,
फड़फड़ाकर कर पर थकित !
.
छतनार यह काला धुआँ
अब दीखता हलका
नहीं गाढ़ा अँधेरा है
वही कल का !
.
•   •
(186) मुझे भरोसा है
.
मैं क़ैद पड़ा हूँ
आज
अँधेरी दीवारों में;
दीवारें —
जिनमें कहते हैं
रहती क़ैद हवा है,
रहता क़ैद प्रकाश !
जहाँ कि केवल फैला
सन्नाटे का राज !
.
पर,
मैं तो अनुभव करता हूँ
बेरोक हवा का,
आँखों से देखा करता हूँ
लक्ष-लक्ष ज्योतिर्मय-पिण्डों को,
मुझको तो
खूब सुनायी देती हैं
मेरे साथी मनुजों के
चलते, बढ़ते, लड़ते
क़दमों की आवाज़ !
मेरे साथी मनुजों के
अभियानों के गानों की
अभियानों के बाजों की
आवाज़ !

.

मुझे भरोसा है —
मेरे साथी आकर
कारा के ताले तोड़ेंगे,
जन-द्रोही सत्ता का
ऊँचा गर्वीला मस्तक फोड़ेंगे !

.

इंसान नहीं फिर
कुचला जाएगा,
इंसान नहीं फिर
इच्छाओं का खेल बनाया जाएगा !

.

• •

(187) मुख को छिपाती रही

.

धुआँ ही धुआँ है,
नगर आज सारा नहाता हुआ है !

.

अँगीठी जली हैं
व चूल्हे जले हैं,
विहग
बाल-बच्चों से मिलने चले हैं !

.

निकट खाँसती है
छिपी एक नारी
मृदुल भव्य लगती कभी थी,
बनी थी
किसी की विमल प्राण प्यारी !

.

उसी की शक़ल अब
धुएँ में सराबोर है !
और मुख की ललाई
अँधेरी-अँधेरी निगाहों में खोयी !

.

जिसे ज़िन्दगी से
न कोई शिकायत रही अब,
व जिसके लिए
है न दुनिया
भरी स्वप्न मधु से
लजाती हुयी नत!

.

अनेकों बरस से
धुएँ में नहाती रही है !
कि गंगा व यमुना-सा
आँसू का दरिया
बहाती रही है !
फटे जीर्ण दामन में

मुख को छिपाती रही है !
.
मगर अब चमकता है
पूरब से आशा का सूरज,
कि आती है गाती किरन,
मिटेगी यह निश्चय ही
दुख की शिकन !
.
• •
(188) नया समाज
.
करवटें बदल रहा समाज,
आज आ रहा है लोकराज !
.
ध्वस्त सर्व जीर्ण-शीर्ण साज़,
धूल चूमते अनेक ताज !
.
आ रही मनुष्यता नवीन,
दानवी प्रवृत्तियाँ विलीन !
.
अंधकार हो रहा है दूर;
खंड-खंड और चूर-चूर !
.
रश्मियों ने भर दिया प्रकाश,
ज़िन्दगी को मिल गयी है आश।
.
चल पड़ा है कारवाँ सप्राण
शक्तिवान, संगठित, महान !
.
रेत-सा यह उड़ रहा विरोध,
मार्ग हो रहा सरल सुबोध;
.
बढ़ रहा प्रबल प्रगति-प्रसार,
बिजलियों सदृश चमक अपार !
.
देख काल दब गया विशाल,
आग जल उठी है लाल-लाल !
.
उठ रहा नया गरज पहाड़,
मध्य जो वह खा गया पछाड़ !
.
पिस गया गला-सड़ा पुराण,
बन रहा नवीन प्राणवान !
.
गूँजता विहान-नव्य-गान;
मुक्त औ' विरामहीन तान !
.
• •

(189) युगान्तर

.

आँधी उठी है समुन्दर किनारे
बढ़ती सतत कुछ न सोचे-विचारे,
लहरें उमड़तीं बिना शक्ति हारे
रफ़्तार यह तो समय की !

.

मानव निकलते चले आ रहे हैं,
उन्मत्त हो गीत नव गा रहे हैं,
रंगीन बादल बिखर छा रहे हैं !
झंकार यह तो समय की !

.

जर्जर इमारत गिरी डगमगाकर,
आमूल विष-वृक्ष गिरता धरा पर,
बहता पिघल पूर्ण प्राचीन पत्थर,
है मार यह तो समय

.

रोड़े बिछे थे हज़ारों डगर में
नौका कभी भी न डोली भँवर में,
बढ़ती गयी व्यक्ति-झंझा समर में
पतवार यह तो समय की !

.

इंसान लेता नयी आज करवट,
सम्मुख नयन के उठा है नया पट,
गूँजी जगत में युगान्तर की आहट,
ललकार यह तो समय की !

.

•   •

(190) छलना

.

आज सपनों की नहीं मैं
बात करता हूँ !
चाँद-सी तुमको समझकर
अब न रह-रह कर
विरह में आह भरता हूँ !

.

नहीं है
रुग्ण मन के
प्यार का उन्माद बाक़ी,
अब न आँखों में
तुम्हारी
झिलमिलाती रूप की झाँकी !

.

कि मैंने आज
जीवित सत्य की
तसवीर देखी है,
जगत की ज़िन्दगी की

एक व्याकुल दर्द की
तसवीर देखी है !
किसी मासूम की उर-वेदना
बन धार आँसू की
धरा पर गिर रही है,
और चारों ओर है जिसके
अँधेरे की घटा,
जा रूठ बैठी है
सबेरे की छटा !
.
उसको मनाने के लिए अब
मैं हज़ारों गीत गाऊँगा,
अँधेरे को हटाने के लिए
नव ज्योति प्राणों में सजाऊँगा !
.
न जब तक
सृष्टि के प्रत्येक उपवन में
बसन्ती प्यार छाएगा,
न जब तक
मुसकराहट का नया साम्राज्य
धरती पर उतर कर जगमगाएगा,
कि तब तक
पास आने तक न दूँगा
याद जीवन में तुम्हारी !
.
क्योंकि तुम कर्तव्य से
संसार का मुख मोड़ देती हो !
हज़ारों के
सरल शुभ-भावनाओं से भरे
उर तोड़ देती हो !
.
•   •
(191) मत कहो
.
आज भय की बात मुझसे मत कहो,
आज बहकी बात मुझसे मत कहो !
.
प्राण में तूफ़ान-से अरमान हैं,
कंठ में नव-मुक्ति के नव-गान है !
.
ज्वार तन में स्वस्थ यौवन का बहा,
नष्ट हों बंधन, सबल उर ने कहा !
.
है तरुण की साधना, गतिरोध क्या ?
है तरुण की चेतना, अवरोध क्या ?
.
द्वंद्व भीषण, है चुनाती सामने,

बीज भावी क्रान्ति बोती सामने !

.

बद्ध प्रतिपग पर समस्त समाज है;
आग में तपना सभी को आज है !

.

आज जन-जन को शिथिलता छोड़ना,
है नहीं कर्तव्य से मुख मोड़ना !

.

इस लगन की अग्नि से जर्जर जले
रक्त की प्रति बूँद की सौगन्ध ले —

.

प्राण का उत्सर्ग करना है तुम्हें,
विश्व भर में प्यार भरना है तुम्हें !

.

धर्म मानव का बसाना है तुम्हें,
कर्म जीवन का दिखाना है तुम्हें !

.

मर्म प्राणों का बताना है तुम्हें,
ज्योति से निज, तम मिटाना है तुम्हें !

.

विश्व नव-संस्कृति प्रगति पर बढ़ चला,
भ्रष्ट जीवन मिट समय के संग गला !

.

काल की गति, भाग्य का दर्शन मरण,
आज हैं प्रत्येक स्वर के नव-चरण !

.

जीर्णता पर हँस रही है नव्यता,
खिल रहीं कलियाँ भ्रमर को मधु बता !

.

ध्वंस के अंतिम विजन-पथ पर लहर,
सृष्टि के आरम्भ के जाग्रत-प्रहर !

.

जागरण है, जागते ही तुम रहो,
नींद में खोये हुए अब मत बहो !

.

आज भय की बात मुझसे मत कहो,
आज बहकी बात मुझसे मत कहो !

.

• •

(192) नया युग

.

ओ ! मनुजता की
करुण, निस्पंद बुझती ज्योति
मेरे स्नेह से भर
प्रज्ज्वलित हो जा !
निविड़-तम-आवरण सब
विश्व-व्यापी जागरण में
आ सहज खो जा !

.

हिमालय-सी
भुजाओं में भरी है शक्ति
जन-जन रोक देंगे आँधियों को,
फेंक देंगे दूर
बढ़ती ज्वार की लहरें !
नयी विकसित
युगों की साधना की फूटती आभा,
नयी पुलकित
युगों की चेतना की जागती आशा,
दलित, नत, भग्न दूहों से
उठी है आज
नव-निर्माण की दृढ़ प्रेरणा !

.

ध्रुव सत्य
होगी कल्पना साकार !
अभिनव वेग से
संसार का कण-कण
नया जीवन, नया यौवन, लहू नूतन,
सुदृढ़तम शक्ति का
संचार पाएगा !

.

नया युग यह
प्रखर दिनकर सरीखा ही नहीं,
पर, है पहुँच आगे बड़ी इसकी —
घने फैले हुए जंगल
भयानक मत्त 'एवर-ग्रीन',
भूतल ठोस के नीचे,
अतल जल के
जहाँ बस है नहीं रवि का
वहाँ तक है
नये युग के विचारों का
अथक संग्राम !

.

कैसे बच सकोगे
ओ पलायन के पुजारी !
आज अपनी बुद्धि की हर गाँठ को
लो खोल,
बढ़कर आँक लो
नूतन सजग युग का समझकर मोल !

.

• •

(193) पदचाप

.

पड़ रहे नूतन क़दम
फ़ौलाद-से दृढ़,
और छोटी पड़ रही छाया

नये युग आदमी की आज !

.

धरती सुन रही पदचाप
अभिनव ज़िन्दगी की !
बज रही झंकार,
मुखरित हो रहा संसार,
नव-नव शक्ति का संचार !

.

परिवर्तन !
बदलती एक के उपरान्त
सुन्दरतर
जगत् की प्रति निमिष तसवीर,
घटती जा रही है पीर,
जागी आदमी की आज तो
सोयी हुई तक़दीर !
रुक गया
मेरे जिगर का दर्द,
बरसों का उमड़ता
नैन का यह नीर !

.

गीले नेत्र करुणा-पूर्ण
तुझको देखते विश्वास से दृढ़तर,
यही आशा लगाये हैं
कि जब यह उठ रहा परदा पुराना
तब नया ही दृश्य आएगा,
कि पहले से कहीं खुशहाल
दुनिया को दिखाएगा !

.

• •

(194) भोर का आह्वान

.

खुल रही आँखें
नयी इस ज़िन्दगी के भोर में !
उठ रहा
उठते दिवाकर संग जन-समुदाय,
भर कर भावना बहुजन हिताय !

.

अंतर से निकलती आ रही हैं
विश्व के कल्याण की
काली अँधेरी रात के तारों सरीखी,
एक के उपरान्त अगणित शृंखला-सी
नव्य-जीवन की सुनहरी आब-सी
स्वर्गिक दुआएँ !

.

देख ली है आज
नयनों ने
नये युग की धधकती आग,

जिसकी उड़ रहीं चिनगारियाँ
हर ग्राम-वन-सागर-नगर के व्योम में !
.
उस घास की गंजी सरीखा
जो लपट से ग्रस्त
धू-धू जल रही है,
ध्वस्त होता जा रहा
छल, झूठ, आडम्बर !
.
कि जिसके वक्ष पर
यह हो रहा है रोशनी-सा
दौड़ता अभिनव-किरण-सा
आज मन्वंतर !
.
कि विद्युत वेग भी पीछे
लरज कर रह गया,
लाखों हरीकेनी हवाएँ तक
ठिठक कर रह गयीं;
लाखों उबलते भूमि के ज्वालामुखी तक
जम गये,
बह न पाया एक पग भी देखकर लावा !
गगन के फट गये बादल
व खंडित हो गयी सारी गरज !
भव का भयानकतम भविष्यत् भी
भरे भय भग गया !
.
विश्वास है —
यह अब न आएगा कभी,
ऐसा ग्रहण फिर
ग्रस न पाएगा कभी
जन-चेतना के सूर्य को !
रे आज सदियों रुद्ध जनता-कंठ
सहसा खुल गया
संसार के इस शोर में !
खुल रही आँखें
नयी इस ज़िन्दगी के भोर में !
.
•   •
(195) निरापद
.
नयी रोशनी है,
नयी रोशनी है !
निरापद हुआ आज जीवन,
निराशा पुरावृत विसर्जन !
.
विषादित-युगों की निशा भी गगन से
अँधेरा उठाकर भगी इस जलन से।

.
महाबल विपुल अब भुजाएँ उठाकर
विरोधी सभी ताक़तों को
गरजकर बिगड़ क्रुद्ध
ललकारता है !
गुनाहों के पर्वत
पिघल कर धँसे जा रहे हैं !
(सुमन शुष्क उपवन में
खिलते चले जा रहे हैं !)
बदलते जगत पर
पुरातन गलित नीति
हरगिज़
नहीं थोपनी है !
नयी रोशनी है !
.
•   •
(196) सुर्खियाँ निहार लो!
.
नये विचार लो !
समाज की गिरी दशा सुधार लो,
                    सुधार लो !
.
रुका प्रवाह फिर बहे,
सप्राण गीति-स्वर कहे,
हृदय अपार स्नेह-धन
भरे उठें असंख्य जन,
प्रभात को धरा जगो पुकार लो,
                  पुकार लो !
.
वतन सुसंगठित रहे,
न एक जन दमित रहे,
न भूख-प्यास शेष हो,
बना नवीन वेश हो,
समय बहाल, सुर्खियाँ निहार लो,
                    निहार लो !
.
विभोर हर्ष-धार में,
सफ़ेद लाल प्यार में,
बहो, बहो, बहो, बहो !
बनी नयी कुटीर है, विहार लो,
                    विहार लो !
.
•   •
(197) युग-परिवर्तन
.
नये प्रभात की प्रथम किरण
विलोक मुसकरा रहा गगन !
.

इधर-उधर सभी जगह
नवीन ज़िन्दगी के फूल खिल गये,
सिहर-सिहर कि झूम-झूम
एक दूसरे को चूम-चूम मिल गये !
.
धूल बन गया पहाड़ अंधकार का,
अटूट वेग है ज़मीन पर नयी बयार का !
कि साथ-साथ उठ रहे चरण,
कि साथ-साथ गिर रहे चरण !
नये प्रभात की नयी बहार बीच
जगमगा उठा गगन !
कि झिलमिला उठा गगन !
.
उर्वरा धरा सुहाग पा गयी,
शरीर में हरी निखार आ गयी,
निहार लो उभार रूप का
पड़ा है सिर्फ़
रेशमी महीन आवरण
अतेज धूप का !
.
बिजलियों ने कर लिया शयन,
हहरती आँधियाँ पड़ीं शरण,
विकास का सशक्त काफ़िला नवीन
कर रहा सुदृढ भवन-सृजन !
.
बेशरम रुके खड़े हैं राह पर,
कि कापुरुष के कंठ से
निकल रहा कराह-स्वर,
सभीत दुर्बलों के बंद हैं नयन,
व मोच खा गये चरण !
.
• •
(198) नयी संस्कृति
.
युग-रात्रि
निश्चय
विश्व के प्रत्येक नभ से मिट गयी !
अभिनव प्रखर-स्वर्णिम-किरण बन
झिलमिलाती आ रही
संस्कृति नयी !
.
सामने जिसके
विरोधी शक्तियाँ तम की
बिखरती जा रहीं,
पर, ये विरोधी शक्तियाँ
        कोई थकी जर्जर नहीं!
.

किन्तु;
इनसे जूझने का आ गया अवसर !
यही वह है समय
जब बल नया पाता विजय !
.
हमला ज़रूरी है,
कि देशों, जातियों, वर्गों सभी की
यह परस्पर की
मिटाना आज दूरी है !
.
इसी के ही लिए
प्राचीन-नूतन द्वन्द्व की आवाज़ है,
प्राचीन — जो म्रियमाण,
जिसका आज
विशृंखल हुआ सब साज़ है !
जिसकी रोशनी सारी
नये ने छीन ली,
और जिसके हाथ से निकला
समस्त समाज है !
बस, पास केवल एक धुँधली याद है,
जिसका तड़पता शेष यह उन्माद है —
'बीते युगों में हम सुखी थे;
किंतु अब रथ सभ्यता का
तीव्र गति से बढ़
पतन-पथ पर
जगत का नाश करने हो रहा आतुर !'
.
हमें अब जान लेना है
विनाशी तत्त्व घातक हैं वही
जो आज यह झूठा तिमिर करते विनिर्मित,
और रक्षक-दीप बनने का
विफल गीदड़ सरीखा स्वाँग भरते हैं !
कि धोखे से उदर अपना
भरा हर रोज़ करते हैं।
भला ऐसे मनुज
क्या लोक के कुछ काम आते हैं ?
नयी हर बात से मुख मोड़ लेते हैं
समय के साथ चलना भूल जाते हैं !
.
नज़र से
क्रीट, बेबीलोन के खण्डहर गुज़रते हैं!
बहाना है न उनको देखकर आँसू,
न उनकी अब प्रशंसा के
हज़ारों गीत गाने हैं !
नहीं बीते युगों के दिन बुलाने हैं !
.
नया युग आ रहा है जो

उसी के मार्ग में हमको
बिछाने फूल हैं कोमल,
उसी के मार्ग को हमको
बनाना है सरल !
जिससे नयी संस्कृति-लता के कुंज में
हम सब खुशी का
गा सकें नूतन तराना !
भूलकर दूख-दर्द
जीवन का पुराना !
.
• •
(199) गंगा बहाओ
.
आज ऊसर भूमि पर गंगा बहाओ !
.
उच्च दृढ़ पाषाण गिर-गिर कर चटकते,
रेत के कण नग्न धरती पर चमकते,
अग्नि की लहरें हवा में बह रही हैं;
रूप घन का शांतिमय जग को दिखाओ !
आज ऊसर भूमि पर गंगा बहाओ !
.
त्रस्त नत मानव प्रकम्पित पात से झर,
झुक गये सब आततायी के चरण पर,
थूक ठोकर नाश दुख निर्मम मरण पर;
आत्म-धन उत्सर्ग की ध्रुव लौ जगाओ !
आज ऊसर भूमि पर गंगा बहाओ !
.
बह चुकी हैं ख़ून की नदियाँ, बिरानी
भू हुई, सत् की असत् ने कुछ न मानी,
और फूटा भय-ग्रसित-रक्तिम-सबेरा,
सूर्य पर छाये हुए बादल हटाओ !
आज ऊसर भूमि पर गंगा बहाओ !
.
• •
(200) नयी रेखाएँ
.
इन धुँधली-धुँधली रेखाओं
पर, फिर से चित्र बनाओ मत !
.
दुनिया पहले से बदल गयी,
आभा फैली है नयी-नयी,
यह रूप पुराना, नहीं-नहीं !
    आँखों से ओझल है कल की
    संस्कृति की गंगा का पानी,
    टूटी-टूटी-सी लगती है
    गत वैभव की शेष कहानी,
        जिसमें मन से झूठी, कल्पित
        बातों को सोच मिलाओ मत !

इन धुँधली-धुँधली रेखाओं
पर, फिर से चित्र बनाओ मत !

.

पहले के बादल बरस चुके,
अब तो खाली सब थके-रुके,
यह गरज बरसने वाली कब ?
नव-अंकुर फूट रहे रज से
भर कर जीवन की हरियाली,
निश्चय है, फूटेगी नभ से
जनयुग के जीवन की लाली,
निस्सार, मिटा, जर्जर, खोया
फिर से आज अतीत बुलाओ मत !
इन धुँधली-धुँधली रेखाओं
पर, फिर से चित्र बनाओ मत !

.

• •

(201) भविष्य के निर्माताओ!

.

जिन सपनों को साकार करोगे तुम
उन पर मुझको विश्वास बड़ा !
मैं देख रहा हूँ
क़दम-क़दम पर आज तुम्हारे
स्वागत को युग का इन्सान खड़ा !

.

जिसके फ़ौलादी हाथों में
हँसते फूलों की ख़ुशबू वाली माला है,
जिसने जीवन की सारी
जड़ता और निराशा का
वारा-न्यारा कर डाला है !

.

वह माला वह इंसान
तुम्हारे उर पर डालेगा;
क्योंकि तुम्हारा वक्षस्थल
जन-जन की पीड़ा से बोझिल है,
क्योंकि तुम्हारे फ़ौलादी तन का
मख़मल जैसा मन
युग-व्यापी क्रन्दन से
हो-हो उठता चंचल है !

.

तुम ही हो जो
इन फूलों की क़ीमत समझोगे!
फिर सारी दुनिया में
हँसते फूलों का उपवन
नभ के नीचे लहराएगा !
मानव फूलों को प्यार करेगा,
अपनी 'श्रद्धा' का शृंगार करेगा,
बच्चों को चूमेगा,

उनके साथ रोज़
हरे लॉन पर
'घोड़ा-घोड़ा' खेलेगा !
.
नयनों में आँसू तो आएँगे
पर, वे बेहद मीठे होंगे !
मरघट की आग जलेगी यों ही
पर, उसमें न किसी के
अरमान अधूरे होंगे !
.
जैसे अब मिलना दुर्लभ है
'ईश' जगत में
वैसे ही तब भी होगा,
पर, हमको-तुमको
(सच मानो !)
उसकी इतनी चिन्ता ना होगी !
उसका और हमारा अन्तर
निश्चय ही मिट जाएगा,
जिस दिन मानव का सपना
सच हो जाएगा !
.
• •

(202) कवि

.
युग बदलेगा कवि के प्राणों के स्वर से,
प्रतिध्वनि आएगी उस स्वर की घर-घर से !
.
कवि का स्वर सामूहिक जनता का स्वर है,
उसकी वाणी आकर्षक और निडर है !
.
जिससे दृढ़-राज्य पलट जाया करते हैं,
शोषक अन्यायी भय खाया करते हैं !
.
उसके आवाहन पर, नत शोषित पीड़ित,
नूतन बल धारण कर होते एकत्रित !
.
जो आकाश हिला देते हुंकारों से
दुख-दुर्ग ढहा देते तीव्र प्रहारों से !
.
कवि के पीछे इतिहास सदा चलता है,
ज्वाला में रवि से बढ़कर कवि जलता है !
.
कवि निर्मम युग-संघर्षों में जीता है,
कवि है जो शिव से बढ़कर विष पीता है !
.
उर-उर में जो भाव-लहरियों की धड़कन,
मूक प्रतीक्षा-रत प्रिय भटकी गति बन-बन,

.
स्नेह भरा जो आँखों में माँ की निश्छल,
लहराया करता कवि के दिल में प्रतिपल !
.
खेतों में जो बिरहा गाया करता है,
या कि मिलन का गीत सुनाया करता है,
.
उसके भीतर छिपा हुआ है कवि का मन,
कवि है जो पाषाणों में भरता जीवन!
.
• •
(203) सदियों बाद
.
सदियों बाद हिले हैं थर-थर
सामंती-युग के लौह-महल,
जनबल का उगता बीज नवल;
धक्के भूकम्पी क्रुद्ध सबल !
.
सदियों बाद मिटा तम का नभ,
चमका नव संसृति में प्रभात,
बीती युग-युग की मृत्यु रात,
डोला मधु-पूरित मलय वात !
.
सदियों बाद उठी है आँधी
कर आज दिशाएँ मटमैली,
धूल क्षितिज पर अहरह फैली;
शक्ति-विरोधी पंगु अकेली !
.
सदियों बाद हँसी है जनता
करने नवयुग की अगवानी;
जीवन की अभिरुचि पहचानी,
दफ़नाने को अश्रु-कहानी !
.
सदियों बाद जगा है मानव
अधिकारों की आवाज़ लगी,
सुन जग की जनता आज जगी
दुख, दैन्य, निराशा भगी-भगी !
.
• •
(204) स्वातंत्र्य-झंझावात
.
चल रहा है वेग से स्वातंत्र्य-झंझावात,
आज जन-जन की पुकारें — अग्नि की बरसात,
आज जनबल की दहाड़ें — मृत्यु का आघात !
.
दासता की शृंखलाएँ तोड़ देंगे आज,
घोर प्रतिद्वन्द्वी हवाएँ मोड़ देंगे आज,
निज निराशा, फूट, जड़ता छोड़ देंगे आज !

.

रक्त-रंजित लाल आँखें माँगतीं प्रतिशोध,
ख़ून का बदला मनुज-बल चाहता भर क्रोध,
चाहता जब नाश, कैसा आज लघु-अवरोध ?

.

चीरती गिरि से चली है तीर-सी जो धार;
म्यान से बाहर निकल ज्यों विकल हो तलवार,
देख जिसको भीत शोषक-वर्ग अत्याचार !

.

झुक नहीं सकते हजारों व्यक्तियों के शीश,
झुक नहीं सकते हज़ारों नारियों के शीश,
झुक नहीं सकते हज़ारों बालकों के शीश !

.

रुक नहीं सकते चरण दृढ़ द्रोहियों के आज,
मिट नहीं सकते दमन की आँधियों से आज,
इन्क़लाबी स्वर दबे कब साथियों के आज ?

.

• •

(205) ध्वस्त करो

.

सब जर्जर-जर्जर ध्वस्त करो !
चिर जीर्ण पुरातन ध्वस्त करो !

.

कण-कण निर्बल क्षीण असुन्दर,
घुन-ग्रस्त, फटा, मैला, झुक कर,
मिटती संसृति में नूतन बल
प्राणों का जीवित वेग भरो !

.

जीवन की प्राचीन विषमता
रूढ़ि सकल, बंधन, दुर्बलता,
दुःख भरे मानव के व्याकुल
अंतर की शंका, ताप हरो !

.

• •

(206) नयी दुनिया

.

तुम आज विचारों के बल से,
जन ! रच दो दुनिया एक नयी !

.

यह उजड़ा वेश धरा का तो,
यह ग्रहण लगा शशि-राका तो,
आँखों को लगता बुरा-बुरा
पी ली मानों प्राचीन सुरा

तुम आज सृजन की घड़ियों में
जन ! रच दो दुनिया एक नयी !

.

तम के बादल काले-काले
गरज रहे हैं बन मतवाले,

घिरती घोर अँधेरी छाया
घेर रही मन को छल-माया,
                    तुम ज्योतिर्मय नव-किरणों से
                    जन ! रच दो दुनिया एक नयी !
.
उठता आता धुआँ गगन से,
व्याकुल मानव क्रूर दमन से,
शोषक-वर्गों का बल संचित
होगा निश्चय आज पराजित,
                    तुम आश नयी उर में भर कर,
                    जन ! रच दो दुनिया एक नयी !
.
•   •
(207) संग्राम
.
आज जीवन की अमरता सोचना, अभिशाप है !
.
सामने जब नाश से उलझा हुआ संघर्ष है,
चाहना परलोक ? जब नव चेतना का हर्ष है,
पंथ पर नूतन चरण की शक्तिमय पदचाप है !
.
आज नूतन का पुरातन पर विजय का नाद है,
सृष्टि नव-निर्माण अविरत-साधना उन्माद है,
वज्र से फौलाद का अंतिम प्रखर आलाप है !
.
घोर झंझा के झकोरों में मरण से द्वन्द्व है,
प्राण पंछी नापता नभ; क्योंकि अब निर्बन्ध है,
वेदना-बोझिल-हृदय का मिट रहा संताप है !
.
बंधनों की अर्गला में बद्ध युग-जीवन न हो,
भय भरी उर में मनुज के एक भी धड़कन न हो,
हो मुखर हर आदमी जो आज नत, चुपचाप है !
.
बन सुदृढ़ संस्कृति सरल नव सभ्यता लो आ रही,
पूर्ण युग-जीवन बदलता औ' बदलती है मही,
नव लहर से विश्व का कण-कण बदलता आप है !
.
•   •
(208) पीयूष-धारा
.
हो गया संसार मरघट,
आज कवि ! पीयूष की धारा बहाओ !
.
हो गये सारे गगन चुंुबी भवन
लुंठित धरा पर ध्वस्त होकर,
आततायी, अदय, बर्बर
राक्षसों के लोटते हैं शव भयंकर,
                    आज नव-निर्माण की दृढ़ चेतना,

प्रत्येक जन-मन में जगाओ !

.

मौन आहुतियाँ अमित, नव बीज
भावी विश्व के बो मिट गयी हैं,
जूझ मानव राक्षसी मति-गति
लहर से खो गये, दुनिया नयी है,
सींच प्रतिपल स्वेद, शोणित,
स्नेह से युग-भूमि को उर्वर बनाओ !

.

रुग्ण जीवन-डाल, पल्लवहीन,
निर्बल, सूख प्राणों का गया रस,
दृष्टि खोयी-सी, मनुज की चेतना
को नाश के तम ने लिया ग्रस,
जागरण का तूर्य गूँजे,
प्रज्वलित जग, सूर्य-सम, रे जगमगाओ !

.

युग-चरण विजड़ित नहीं हों,
शक्ति-आशा-स्वर ध्वनित तूफ़ान डोले,
कोटि हाथों से उठे नव-राष्ट्र
जन-मन गर्व से जय मुक्त बोले,
रागिनी नूतन, उषा की रश्मि से
अब मृत्यु की छाया हटाओ !

.

•   •

(209) युग-विहग

.

शून्य नभ में युग-विहग तुम
एक गति से ही उड़ोगे,
तुम उड़ोगे !

.

रुक नहीं सकते कभी भी
पंख उठते और गिरते ही रहेंगे,
थक नहीं सकते कभी भी;
राह पर आ मेघ घिरते ही रहेंगे,
विश्व को संदेश नूतन
मुक्ति का दे, तुम बढ़ोगे,
तुम बढ़ोगे !

.

अग्नि-पथ पर, स्वस्थ मन से,
आत्म-संबल के सहारे और निर्भय,
पद-प्रदर्शक, ज्ञान-दीपक,
नव-सृजन से, सर्वहारा-वर्ग की जय,
युग-विरोधी शक्तियों को
तुम चुनौती दे चढ़ोगे,
तुम चढ़ोगे !

.

•   •

(210) जन-समुन्दर

.

अग्नि-पथ है, प्रज्वलित लपटें गगन में,
स्वार्थ, हिंसा, लोभ, शोषण, नाश रण में,
चल रहे हैं, पर, चरण युग के निरंतर,
साँस में हुंकारते मुठभेड़ के स्वर,
युग-विरोधी शक्तियों को दे चुनौती
हर क़दम पर, हर क़दम पर
बढ़ रहा दृढ़ जन-समुन्दर !

.

ये चरण युग के चरण हैं, कब झुकेंगे ?
ये शहीदों के चरण हैं, कब रुकेंगे ?
कौन-सा अवरोध आहत कर सकेगा ?
पंथ पर तूफ़ान आहें भर थकेगा !
ये करेंगे विश्व नव-निर्माण बढ़ कर
हर क़दम पर, हर क़दम पर
बढ़ रहा दृढ़ जन-समुन्दर !

.

नाश को ललकारती है युग-जवानी,
क्रांति का आह्वान करती आज वाणी,
प्राण में उत्साह नूतन ताज़गी है,
युग-युगों की साधना की लौ जगी है,
सामने जिसके ठहरना है असम्भव !
हर क़दम पर, हर क़दम पर
बढ़ रहा दृढ़ जन-समुन्दर !

.

•   •

(211) मुक्ति की पुकार

.

बद्ध कंठ से सशक्त मुक्ति ही पुकार !

.

धैर्य पूर्ण उर सबल
लक्ष्य ओर दृढ़ चरण
व्यर्थ नाश-शस्त्र सब
व्यर्थ क्रूरता दमन
झुक सका न शीश, मिल सकी न क्षणिक हार !

.

अंध छा गया सघन
आज पर्व है प्रलय
राजनीति का कुहर
भर गया सहज निलय
तोड़-फोड़ सृष्टि-नाट्य ध्वस्त तार-तार !

.

तीव्र सिंह से गरज
मेघ से विशाल बन
चल पड़े निशंक सब
विश्व के नवीन जन
लाल-लाल सब जहान का बना सिँगार !

.
•	•
(212) अजेय

.

मुझको मिली कब हार है !

.

तुम रोकते हो क्यों मुझे ?
तुम टोकते हो क्यों मुझे ?
धधका निराशा का अनल
तुम झोंकते हो क्यों मुझे ?
हैं अमर मेरे प्राण
मेरा अमर हर उद्गार है !

.

रुकना मुझे भाता नहीं,
थकना मुझे आता नहीं,
सह लक्ष-लक्ष प्रहार भी
झुकना मुझे आता नहीं,
प्रत्येक क्षण गतिवान जीवन
शक्ति का संसार है !

.

मैं बढ़ रहा तूफ़ान में,
ले क्रांति-ज्वाला प्राण में,
वरदान मुझको मिल रहा
प्रतिपद अभय बलिदान में,
नौका भँवर में हो फँसी
साहस अथक पतवार है !

.
•	•
(213) ढहता महल

.

द्रोह-युग प्रत्येक मानव-वर्ग में संघर्ष,
है कहाँ जन-मुक्ति, सुख, स्वाधीनता का हर्ष !

.

क्रूर बर्बर घोर हिंसक नाश-वाहक द्वन्द्व,
प्राण जन के त्रस्त, जीवन-मुक्ति के पट बन्द !

.

कौन छाया-सा भयंकर देखता है घूर
ठीक सिर पर आ गया जो था अभी तक दूर !

.

बद्ध खूनी लाल पंजे में हुआ समुदाय
चीखता, रोदन करुण, नत प्रति निमिष निरुपाय !

.

स्वार्थ औ' पाखंड-संस्कृति से विनिर्मित भूत
पत्र, मिल, पूँजी, सबल कल, जाल-सा बुन सूत !

.

फल गयी मकड़ी, समाजी तन सतत घुल क्षीण
हो रहा जर्जर, धँसी ले आँख पीली दीन !

.

पर, नयी अब उत्तरी-ध्रुव से उठी आवाज़,
देखता हूँ विश्व, केवल रूस जनता राज !
.
दे रहा साहस, दिशा, संबल, सृजन की शक्ति
स्तम्भ मानवता सुदृढ़, पा शोषितों की भक्ति !
.
• •
(214) संक्रांति-काल
.
त्रस्त जीवन, खलबली चहुँ ओर, आहत मूक व्याकुल प्राण!
.
छोड़ता हूँ आज जर्जर क्षीण मृत प्राचीन संस्कृति प्यार,
चल पड़ा खंडित धरित्री पर बसाने को नया संसार,
स्तब्धता, सुनसान, पथ वीरान, गुंजित हो नयी झंकार,
आज फिर से नव सिरे से चाहता हूँ विश्व का निर्माण!
.
व्योम कुहराच्छन्न, गहरा तम घिरा, कम्पित धरा भयभीत,
विश्व-आँगन में मचा रोदन, खड़ी है दुःख की दृढ़ भीत,
राह जीवन की विषम है, हो रहीं जग-नाश की सब रीत
सूर्य-किरणों से खुलें सब द्वार, जीवन हर्ष हो उत्थान !
.
सभ्यता कल्याणमय, सुखमय, नवल निर्मित, सबल हो नींव,
एकता आधार पर जग के खड़े हों, जी सकें सब जीव,
ध्वस्त पूँजीवाद तानाशाह भू-नासूर फोड़े पीब,
शक्ति ऐसी चाहता जिससे जगत को दे सकूँ वरदान !
.
रूढ़ियों की जटिल जकड़ी लौह-कड़ियाँ झनझना कर तोड़,
अंध सब विश्वास, घेरे सर्प-से मन को, निमिष में छोड़
सभ्यता की डाल पर पटकी कुल्हाड़ी आज दूँगा मोड़,
टूटती-गिरती दिवारों पर, लगें फिर गूँजने मधु गान !
.
शक्ति का संग्राम, सागर में उठा उन्मत्त दुर्दम ज्वार,
तीव्र गति से टूट द्वीपी-तट, प्रखर बढ़तीं अनेकों धार,
शक्ति जन-जन की लगी है,आज किंचित मिल न सकती हार,
कौन कुचलेगा जगत में सर्वहारा वर्ग का अभिमान ?
.
ध्येय है आगे, चरण पथ पर बढ़ेंगे, है न कोई रोक,
स्वत्व का — अधिकार का संघर्ष झंझा-सा, न कोई टोक,
क्रांति की जलती-भभकती अग्नि में जब तन दिया है झोंक,
है न कोई मोह-ममता का, प्रलोभन का कहीं सामान !
.
जग बदलता है, जगत का हर मनुज बदले बिना अवरोध,
मानवोचित सभ्यता में हो रहे प्रतिपल निरन्तर शोध,
साधना दृढ़ शांत संयम से बँधी, थोथा नहीं है क्रोध,
मिल रहे जन-राष्ट्र, शोषण लूट भक्षक-नीति का अवसान!
.
• •
(215) पाषाण-उर

.

आज मानव का हृदय तो बन गया पाषाण !

ख़ून से विचलित नहीं होते तनिक भी प्राण !

.

जल गया है अग्नि में मधु स्नेह,
रिक्त अंतिम बूँद, जर्जर देह,
गिर रहा दुख के घनों से मेह,
टूट कर ढहता सुरक्षित गेह,
कष्ट-कंटक आपदाओं में फँसी है जान !

.

बढ़ रही है विश्व-भक्षक प्यास,
पी चुका इतना कि अटकी साँस,
है नहीं कोमल अधर पर हास,
क्रूरता, हिंसा, नहीं विश्वास,
कर्ण-भेदी गा रहा फूहड़ घृणा का गान !

.

उड़ रही मरुथल सरीखी धूल,
साथ उड़ते टूट सूखे फूल,
आश-तरु उखड़े सभी आमूल,
डूब जल में सब गये हैं कूल,
नाश का ज्वालामुखी फूटा, कहाँ निर्माण ?
आज मानव का हृदय तो बन गया पाषाण !

.

•   •

(216) मानवी-व्यापार

.

मानवी-व्यापार कितनी दूर !

.

दूर जन-जन से सहज उमड़ा हुआ मधु प्यार,
दूर जन-जन से सरल, सुख, शांति का संसार,
हो रहा है पीड़ितों का आत्म-गौरव चूर !
मानवी-व्यापार कितनी दूर !

.

चाहता मानव कि भर लूँ स्वर्ण-निधि से कोष,
कर रहा अभियान निर्भय, है नहीं संतोष,
दानवी-बल नाश-हिंसा-भावना भरपूर !
मानवी-व्यापार कितनी दूर !

.

नाज़ियों-सा क़ाफिला बन कर रहा प्रस्थान,
सत्य-शिव-सुंदर जलाने, सर्वनाशक गान,
देखते बरबाद करने के घृणित ग्रह घूर !
मानवी-व्यापार कितनी दूर !

.

आततायी शक्ति का सूरज कहाँ है अस्त ?
आज ज्वाला-ग्रस्त दुर्बल वर्ग जग का त्रस्त,
आज तो पथ-भ्रष्ट मानव हिंस्र ख़ूनी क्रूर!
मानवी-व्यापार कितनी दूर !

.
•   •
(217) इतिहास
.
विश्व अस्थिर, प्रति चरण पर
बन रहा है नित्य नव इतिहास !
.
क्षण गिराते जा रहे हैं,
क्षण मिटाते जा रहे हैं,
आज देशों को धरा से,
युद्ध की गढ़-कन्दरा से,
ऊर्ध्व अविरत राष्ट्र अगणित,
ले रहे कुछ क्षीण अंतिम साँस !
विश्व अस्थिर, प्रति चरण पर
बन रहा है नित्य नव इतिहास !
.
कल प्रगति के जो शिखर पर
आज निर्बल शक्ति खोकर
पद-दलित हो, रजकणों-सम
हैं धराशायी, तिमिर-भ्रम,
खिल रहा उजड़े चमन में
भव्य आशा का कहीं मधुमास !
विश्व अस्थिर, प्रति चरण पर
बन रहा है नित्य नव इतिहास !
.
नीतियाँ औ' वाद कितने,
भिन्न जग के नाद कितने,
दे रही प्रतिपल सुनायी
आज ज़ोरों से मनाही,
बढ़ रही मन में निरन्तर
मनुज के आ विश्व-भक्षक प्यास !
विश्व अस्थिर, प्रति चरण पर
बन रहा है नित्य नव इतिहास !
.
(218) झंझा में दीप
.
आज तूफ़ानी निशा है, किस तरह दीपक जलेंगे !
.
मुक्त गति से दौड़ती है शून्य नभ में तीव्र झंझा,
शीर्ण पत्रों-सी बिखरती चीखती हत त्रास्त जनता,
क्योंकि भीषण ध्वंस करतीं बदलियाँ नभ में चली हैं,
क्योंकि गिरने को भयावह बिजलियाँ नभ में जली हैं,
मेघ छाये हैं प्रलय के, नाश करके ही टलेंगे !
आज तूफ़ानी निशा है, किस तरह दीपक जलेंगे !
.
आज जन-जन को जलाना है न, निज गृह दीप-माला,
आज तो होगी बुझानी सर्व-भक्षक विश्व-ज्वाला,

तम धुआँ छा प्रति दिशा में घिर गया गहरा भयंकर
युग-युगों का मूल्य संचित मिट रहा, रोदन भरा स्वर,
कर्ण-भेदी लाल अंगारे स्वयं फटकर चलेंगे !
आज तूफ़ानी निशा है, किस तरह दीपक जलेंगे !

.

एकता की ज्योति हो; जिससे मिले मधु स्नेह अविरल,
और तूफ़ानी घड़ी में जल सके लौ मुक्त चंचल,
शक्ति कोई भी न सकती फिर मिटा, चाहे सुदृढ़ हो,
विश्व का हिंसक प्रलयकारी भयंकर नाश गढ़ हो,
फिर नहीं इन आँधियों में दीप जीवन के बुझेंगे !
आज तूफ़ानी निशा है, किस तरह दीपक जलेंगे !

.

• •

(219) होली जलादो

.

आज मेरी देह की होली जला दो !

.

घिर गया जब घोर अँधियारा गगन में
घुट रहे हैं प्राण सदियों से जलन में
विश्व ज्योतिर्मय करो भावी मनुज, लो -
आज मेरी देह की होली जला दो !

.

ज्वाल की लपटें समा लें अश्रु-सागर,
हो अशिव सब भस्म जग का मौन कातर,
मात्रा उसको हर असुन्दर कण बता दो !
आज मेरी देह की होली जला दो !

.

ज्वाल होगी जो प्रलय तक साथ देगी
सूर्य-सी जल भू-गगन रौशन करेगी,
इसलिए, तम से घिरों को ला मिला दो !
आज मेरी देह की होली जला दो !

.

यह जलेगी भव्य शोभा संचिता हो,
घेर लेना विश्व तुम मेरी चिता को,
देखकर बलिदान की धारा बहा दो !
आज मेरी देह की होली जला दो !

.

• •

(220) अभियान के बाद

.

गूँजते रह-रह करुण-स्वर !

.

रक्त की नदियाँ बहा कर
दिग-दिगन्तों को हिला कर
थम गये निर्मम बवंडर,
आज जन-जन के व्यथित उर !
मुक्त युग-खग के दमित पर !
गूँजते रह-रह करुण-स्वर !

.

होम वैभव कर, निरन्तर
नृत्य दानव का भयंकर
हो चुका मानव-अवनि पर,
                  नाश हिंसा से चकित हर !
                  विश्व में मानों जड़ित डर !
                  गूँजते रह-रह करुण-स्वर !

.

• •

(221) प्रलय

.

उजड़ा पड़ा सारा नगर,
सूनी पड़ी सारी डगर,
चिड़ियाँ तृषित सहमी खड़ीं,
कुटियाँ सकल टूटी पड़ीं,
                  छायी अवनि-आकाश में दहशत !

.

आ सनसनाता है पवन,
क्रोधित प्रखर धधकी जलन,
ज्वाला ग्रसित अगणित सदन,
उर्वर हुआ, सूखा विजन,
                  दृढ़ उच्च दुख का बन गया पर्वत !

.

कण-कण गया भू का सिहर,
उर में बही भय की लहर,
हिंसक बढ़े जब घिर अमित,
क्रन्दन, मरण जन-जन दमित,
                  दुर्बल जगत सारा हुआ आहत !

.

• •

(222) इंकलाब

.

त्रस्त सदियों के घृणित इतिहास पर छा
क्रांति की लपटें धधकती हैं भयंकर,
रुद्ध प्राणों के दमन से बंद थे पट
टूट कर गिरते अवनि पर डगमगा कर !

.

'न्याय' के स्वर पर दबी थी विश्व जन-जन
की करुण दुख से भरी वाणी सतायी,
वह कहीं से राह पाकर फूट निकली
है व्यथा से चूर्ण — रक्षा की दुहायी !

.

फूट निकली हैं उमड़ती एक के उपरांत
सरिताएँ विजन खोयी हुई-सी,
फूट निकला है कि लावा गर्म भीषण
गर्भ-भू से, विषमता धोयी हुई-सी !

.

आज जीवन मुक्ति का आह्वान आया

सुप्त जगती के कणों में चेतना है,
धमनियों में रक्त का संचार अविरल
वज्र-सा बल-वेग, अभिनव प्रेरणा है !
.
शक्तियाँ नूतन जगत-निर्माण करने
बढ़ रहीं नव-सभ्यता-आदर्श पर हैं,
विश्व के कल्याण के साक्षी बनेंगे
द्रोह जीवन-भावना-संगीत-स्वर हैं !
.
आँधियाँ काली क्षितिज पर उड़ रही हैं,
जीर्णता प्राचीन मिटती जा रही है,
हो रहे कोंपल नये विकसित अवनि पर,
सृष्टि नूतन वेश प्रतिपल पा रही है !
.
देश और समाज की क्षय नीतियाँ मिट
नव सरल शासन व्यवस्था बन रही है,
लूट-शोषण की प्रथा को छोड़कर, अब
एक नूतन भव्य दुनिया बन रही है !
.
भव्य दुनिया वह कि जिसमें रह सकेंगे
सम दुखों में, सम सुखों में वर्ग सारे,
भव्य दुनिया वह कि जिसमें रह सकेंगे
विश्व-मानव एक-सा ही रूप धारे !
.
• •
(223) जागरण
.
संसार के तरुण जगे
प्रत्येक के नयन जगे
विद्रोह-अग्नि से दिशा जली,
          दिशा जली !
.
हुंकार जन-चरण बढ़े
ललकार जन-चरण बढ़े
लो साम्य-सूर्य से निशा मिटी,
            निशा मिटी !
.
जन-शक्ति का प्रहार है,
उन्मुक्त राह-द्वार है,
नव विश्व-सृष्टि है — उषा जगी,
         उषा जगी !
.
• •
(224) परिवर्तन
.
दुनिया का कण-कण परिवर्तित
गूँजा जीवन-संगीत नवल,
प्रतिक्षण सुंदरतर निर्मिति हित

है व्यस्त सतत जन-जन का बल !

.

सदियों का सोया जागा है
युग-मानव नव बन आया है,
जल जाएगा विश्व अशिव सब
यह अनबुझ ज्वाला लाया है !

.

मिथ्या विश्वासों के शव पर
नव-संस्कृति-ज्वाला रही बिखर,
पिछड़ी सोयी मानवता के
नयनों में नव-आलोक प्रखर !

.

आँसू, लूट, नाश का निर्मम
रक्तिम, वहशी इतिहास गया,
क्षत-विक्षत जग के आँगन का
होता अब तो निर्माण नया !

.

• •

(225) उद्बोधन

.

जीवन मुक्त करो !

.

सदियों की बद्ध शृंखला,
निष्क्रिय खंडित भ्रमित कला,
तमसावृत सृष्टि अर्गला,
नूतन रवि-रश्मि प्रखर से सब छिन्न करो !
तन-मन मुक्त करो !

.

जन-जन पीड़ित अपमानित,
बंधन-ग्रस्त अवनि लुंठित,
निर्बल, नत, मूक, पराजित,
स्वाभिमान मर्माहत, जड़ता भंग करो !
जन-जन मुक्त करो !

.

ठोकर, क्षुधा, अभाव, मरण,
कटु जीवन का सूनापन,
लज्जा का इतिहास, दमन,
सामूहिक हुंकारों से विद्रोह करो !
जग को मुक्त करो !

.

• •

226) सम्बल

.

प्रगति ही ध्येय जीवन का, बना संबल !

.

गहन जीवन-समुंदर में
रहीं प्रतिबार उठ-गिर वेग से लहरें,
बना सुख-दुख किनारे

ज़िन्दगी बहती सरल-दृढ़ बन, बिना ठहरे,
उमड़ते ज्वार के सम्मुख
तनिक भी प्राण मानव के नहीं सिहरे,
जटिलता राह की कब कर सकी दुर्बल ?
प्रगति ही ध्येय जीवन का, बना संबल !

.

झुका कब शीश मानव का,
निमिष भर, पत्थरों की चोट से पीड़ित,
हुआ कब धैर्य जीवन में
सबल युग-प्राण का किंचित कहीं विगलित,
प्रहारों से हुआ देदीप्य मुख,
बढ़ती गयी तन कांति हो ज्योतित,
सतत युग-साधना-व्रत चल रहा अविरल !
प्रगति ही ध्येय जीवन का, बना संबल !

.

हिमालय-सी सुदृढ़तम दीर्घ
बाधाएँ खड़ी हैं राह में अड़कर,
बरसते व्योम से शोले, धधकते
लाल, धू-धू जल रहा हर घर,
गिरा देना कठिन पथ पर
हवाएँ चाहतीं बहकर प्रखर सर-सर,
चरण पर, बढ़ रहे हैं, ज्वाल में जल-जल !
प्रगति ही ध्येय जीवन का, बना संबल !

.

बनी तूफ़ान-स्वर साथिन
अमर यौवन भरी ललकार यह मेरी,
डोलती है वायु में उन्मुक्त
जीवन-चेतना-तलवार यह मेरी,
हिला देगी सुदृढ़ पर्वत-
शिला-अन्याय की, हुंकार यह मेरी,
हृदय में आग, नवयुग की मची हलचल !
प्रगति ही ध्येय जीवन का, बना संबल !

.

• •

(227) नया दृश्य

.

सामने सौ-सौ विपथ के मृदु प्रलोभन
घेर साधक को, रहे कर मुग्ध नर्तन !

.

मुक्ति औ' स्वच्छंदता का उर दबाकर
बाँसुरी तम-युग विजन की कटु बजाकर,

.

जो सफलता पर अशिव की गा रहा है
समय उसका भी मरण का आ रहा है !

.

शीघ्र होगा अब दनुजता-मान-मर्दन
आज अंतिम टूटते हैं मनुज-बंधन !

.

शीघ्र गूँजेगी गगन में महत मानव
लोकवाणी शक्तिशील और अभिनव !

.

दे सकेगी पीड़ितों को सुदृढ़ संबल
विश्व के सब शोषितों को स्नेह निश्छल !

.

हत प्रताड़ित नत दुखी बेचैन जन-जन
सुन सकेंगे तूर्य नव उन्मुक्त जीवन !

.

चिन्ह नवयुग के प्रखर देते दिखायी,
ज्योति नूतन, सृष्टि-कण-कण में समायी !

.

शीघ्र उभरेगा, जगत का हर दबा स्वर,
इस बदलती शुभ घड़ी में जाग 'सुंदर' !

.

आज दुर्बल क्षीण स्वर देता न शोभन,
आज कवि का हो सबल नव भाव-चित्रण !

.

• •

(228) नयी रचना

.

नवीन ज्योति की किरण
सुदूर व्योम से
सघन युगीन अंधकार
छिन्न-भिन्न कर
उतर रही मिटा निशा
चमक उठी दिशा-दिशा !

.

नवीन मेघ की झड़ी
सुदूर व्योम से बरस पड़ी
नहा गया नगर
नहा गयी गली-गली
बहा गयी सभी
पुराण जीर्णता गली-सड़ी !

.

बरस रही नये विचार की झड़ी
नहा रहा मनुष्य विश्व का,
विकास-पंथ द्वार पर
खड़ा मनुष्य विश्व का,
कि खिल रहे समाज में
नवीन फूल,
सृष्टि ने बदल लिए दुकूल !

.

नव सुगन्ध से भरी हवा
सुदूर व्योम से
अशेष वेग ले

नवीन लोक का रहस्य विश्व को बता गयी !
अथक प्रयत्न शक्ति दे गयी !
.
उभर रहा समाज का नवीन शृंग !
बन रहा नया विधान
जन प्रधान
ध्वंस-सृष्टि
संग-संग !
.
• •
(229) हुंकार
.
हुंकार हूँ, हुंकार हूँ !
मैं क्रांति की हुंकार हूँ !
मैं न्याय की तलवार हूँ !
.
शक्ति जीवन जागरण का
मैं सबल संसार हूँ !
लोक में नव-द्रोह का
मैं तीव्रगामी ज्वार हूँ !
.
फिर नये उल्लास का
मैं शांति का अवतार हूँ !
हुँकार हूँ, हुंकार हूँ !
मैं क्रांति की हुंकार हूँ !
.
•
(230) नयी निशानी
.
जन-जन के मानस पर रूढ़ि पुरातन हावी
पर, निश्चय, नव किरणों से चमकेगा भावी !
.
प्रतिद्वन्द्वी, प्रतिगामी, प्रतिध्वनि सकल विरोधी
तम का परदा काला, दुर्गमता अवरोधी,
.
नव लहरों के अविरल धक्कों से हो आहत
हो जाएगा सभी प्रगति के चरणों पर नत !
.
युग गति का वेग असह्य दुर्जय भारी दुर्दम
सतत प्रखर जिसके हैं विद्युतमय सकल क़दम !
.
चट्टानें तड़क रहीं, भीषण स्वर, लुंठित
झ×झा के पीछे हो खंडित शिथिल पराजित !
.
टूटीं जटिल सभी आज समाजी सीमाएँ,
धू-धू कर धधक रहीं प्राचीन विषमताएँ !
.
भू-कंपन से उखड़ी जाती जड़ें पुरानी,

दीख रही धरती पर उगती नयी निशानी !
.
एक नयी दुनिया का संदेश सुना जग ने,
सावधान हो, सोये जन, मुक्त जगे लगने !
.
सत्य प्रखर हो सम्मुख आया मानवता के,
स्वर फूट पड़े चहुँ ओर नयी ही समता के !
.
परिवर्तन, विप्लव युग, है व्यस्त सतत मानव,
लाने को अवनी पर ज्योतिर्मय युग अभिनव !
.
•   •
(231) युग-निर्माता
.
झंझा में झूले वह जिसको निज पथ की पहचान
आग जलाकर चले वही जिसके चेहरे पर मुसकान !
.
जगमग उसके नेत्र कि जिसमें जीवन तीव्र प्रकाश,
धड़कन उसके उर में, जिसमें भावी की है आश,
.
सुप्त पड़ा निर्जीव वही जिसका तन ठंडी लाश
गंभीर हिमालय-सा वह; है जिसका शीश महान !
.
ज्वाला जिसके अंग-अंग में, दे प्राणद संदेश,
युग-निर्माता वह जिससे दूर नहीं हो जीवन-क्लेश !
.
सैनिक वह ही केवल जिसका सुदृढ़ अहिंसक वेष,
युग-संचालक, मुखरित हो, जब छाया हो सुनसान !
.
तलवार वही साधक जिससे कँपता हो संसार,
ढह कर गिर जाए झट, सरके — वह आधार !
.
तूफ़ानी सागर में खे ले नौका — वह पतवार,
ऐसा हो जग की जनता के नेता का अभिमान !
.
•   •
(232) धधकती आग
.
गीत गाने के लिए मेरे विकल हैं प्राण !
.
क्षितिज-रेखा पर दिखाई दे रहे हैं
दग्ध उजड़े लोक के ही दाग़,
और चारों ओर धधकी विप्लवी
भीषण मचल कर नाशकारी आग,
दूर हो अभिशाप — प्रस्तुत सृष्टि का वरदान !
.
असह, देती हैं हिला, पीड़ा पुकारें,
क्रूर-उर-पाषण भी झकझोर,

आदमी का दर्प पागल बन, धुआँ —
ज्वालामुखी-सा फट रहा है घोर,
मिट गया है आज मानव का सकल अभिमान !
.
देखता हूँ, हो रहा है घोर बर्बर
नृत्य-तांडव, हिंस्र निर्मम ध्वंस,
देखता हूँ, हो रहे हैं राख ज़िंदा
तड़प मानव तोड़कर दम, ध्वंस,
दीखते दीवार पर चित्रित करुण आख्यान !
.
•   •
(233) गाड़ता हुआ
.
हो रहा है दुंदभी का घोष द्वार-द्वार पर,
हिल रही है सुप्त कब्र-कब्र नव-पुकार पर !
.
पूर्व रूप पर नवीन शक्ति जैतवार है,
दर्प की शिला तड़क रही, नया प्रहार है !
.
ज़िन्दगी ने कर दिये दलित सशक्त-कठघरे,
भूमि पर गिरा दिये कुलाधि पात्र विष भरे !
.
तारतम्य रोशनी सदृश अटूट चल रहा,
दाघ-दाझना से मिट रहा विपक्ष बल महा !
.
आफ़तों के बादलों के झुक गये हैं गर्व सिर,
और गर्जनों का है दहाड़ता हुआ विलीन स्वर !
.
आ रहा है युग नया-नया लथाड़ता हुआ,
दुश्मनों की मौत कर जघन्य गाड़ता हुआ !
.
•   •
(234) शहीदों का गीत
.
यह शहीदों का अमर पथ
रोकना इसको असम्भव !
मेटना इसको असम्भव !
.
चल रहे जिस पर युगों से दृढ़ चरण शत-शत निरंतर,
एक धुन है, स्फूर्तिमय क्रम, गान में ले प्रलय का स्वर,
मध्य की अठखेलियाँ तूफ़ान - झंझावात अगणित
ये थके कब, ये रुके कब, ये झुके कब, प्राण के हित?
चल रहे अविराम गति से
रोकना इनको असम्भव !
यह शहीदों का अमर पथ
मेटना इसको असम्भव !
.
रोक सकते राह के कंटक नहीं, रोड़े नहीं, भय,

तिमिर भी क्या कर सकेगा, हो चुका पथ पूर्व-परिचय,
शृंखलाएँ बंधनों की तोड़ने ये बढ़ रहे हैं,
स्वत्व के संग्राम में औ' मुक्त होने लड़ रहे हैं,
ये अमर बन मिट रहे हैं
रोकना इनको असम्भव !
यह शहीदों का अमर पथ
मेटना इसको असम्भव !

.

वेदना शत-शत, मरण-दुख, अश्रु, ममता प्यार, क्रन्दन,
कर नहीं सकते विकंपित मोह के अविराम साधन,
दण्ड, अत्याचार, पशुबल, नाश के हथियार भीषण,
कर सकेंगे मुक्ति-पथ से क्या विपथ? जब है, सुदृढ़ मन!
हो चुकी भीषण परीक्षा
रोकना इनको असम्भव !
यह शहीदों का अमर पथ
मेटना इसको असम्भव !

.

विश्व के कल्याण की शुभ-भावना साकार करने,
मुक्त जीवन की प्रखरता को बसा, दुख-क्लेश हरने,
ये जगे जब-जब जगत में, न्याय के स्वर को दबाया
ये रहे बस मौन जब-तक, ज़ोर शोषण ने न पाया,
शक्तिमय हुंकार इनकी
रोकना जिसको असम्भव !
यह शहीदों का अमर पथ
मेटना इसको असम्भव !

.

• •

(235) मुझे है याद

.

मुझे है याद तेरा क्रूर पागल रूप हत्यारा,
बहायी थी जमीं पर बेरहम जब रक्त की धारा,
जलाये गाँव थे पूरे, उजाड़ी बस्तियाँ अगणित
मुझे है याद ज़ुल्मों का दमन इतिहास वह सारा !

.

नयन जिनने कि तेरी दानवी तसवीर देखी है,
हृदय जिसने असह घुटती हुई वह पीर देखी है,
कभी क्या भूल सकती हैं दुखी आहें गरीबों की
कि जिनने मूक मिटने की सदा तक़दीर देखी है ?

.

बग़ावत के गगन में मुक्त हो झंडे उठाये हैं,
शहीदी शान से जिनने अभय हो सिर कटाये हैं,
चरण जिनके सदा गतिशील आगे ही उठे दुर्दम
सतत संघर्ष में हर बार जिनने घर लुटाये हैं !

.

जलन की आग जो धधकी हृदय रह-रह जलाती है,
कहानी सिसकियाँ-आँसू भरी निर्मम सताती है,
चुनौती आज देता है सबल पुरुषार्थ यह मेरा

कि साँसें हर घड़ी तूफ़ान के धक्के बुलाती हैं !

.

कि तेरे राज में हमने जवानी को मिटाया है,
ठिठुरते नग्न बच्चों को सदा भूखा सुलाया है,
सुनहली भवन-जीवन-स्वप्न की दुनिया बनाने की
हमारी कामना को धूल में तूने मिलाया है !

.

जला देगी नयन के आँसुओं से फूटती ज्वाला
सभी बंधन विषमता के, अबुझ प्रतिशोध की हाला,
हमारी धमनियों में रक्त की नूतन भरी लहरें
प्रहारों से मिटेगा वर्ग शोषक क्रूर मतवाला !

.

• •

(236) कला

.

जो सुदूर स्वप्न-राज्य की विहारिका
व्योम पार देश की रही निहारिका
कर्म-मार्ग हीन, स्वर्ण-विश्व साधिका
द्वन्द्व से विमुख, सदा नवीन बाधिका
हेय व्यर्थ युग-उपेक्षिता अमर कला !

.

धूल से विलग विचार वास्तविक नहीं
झूठ शब्द-जाल चित्र-मात्र है वही
जो मनुष्य भाव-राग से जुड़ा न हो
दर्द-हास तार से सहज बुना न हो
कब समाज में टिका ? कहाँ अरे चला ?

.

व्यक्त सिर्फ़ आज के सवाल चाहिए
तम नहीं प्रभात लाल-लाल चाहिए
व्यक्ति की करुण कराह है उतारनी
आग जो दबी उसे पुनः उभारनी
सब कुरीतियाँ मिटें, प्रहार ज़लज़ला !

.

भावना निराश ना मृतक समान हो
अश्रु औ' रुदन नहीं, न मोह गान हो,
आज जीर्ण देह तोड़ता मजूर है —
पर, समानता समय बहुत न दूर है,
कवि मुखर करो ! य' किसलिये कला भला ?

.

• •

(237) युग कवि से

.

ऐसे गीत नहीं गाने हैं !

.

जो गति का साथ नहीं देंगे
गिरते को हाथ नहीं देंगे
निर्धन त्रस्त उपेक्षित व्याकुल
जनता के भाव नहीं लेंगे,

युग कवि ! तुमको हरगिज़, हरगिज़
ऐसे गीत नहीं गाने हैं !
.
भूल जगत, मानव-आवाहन
सर्वस्व समझ नभ-आकर्षण
पहले तारक-दल का सुनना
मूक स्वरों का मौन-निमंत्रण,
सपनों के निर्जीव अचेतन
माया गीत नहीं गाने हैं !
.
जिनमें जीवन का वेग नहीं
दुनिया जिनकी है दूर कहीं
जो मनुज-हृदय को शिथिल करें
जो बदल न पाएँ रूढ़ मही,
उर उत्साह मिटाने वाले
रोदन गीत नहीं गाने हैं !
.
नक़ली भावों के हलके स्वर
क्या हुए कभी भी कहीं अमर
जब तक सुख-दुख का अनुभव कर
न कहोगे जीवन-सत्य प्रखर,
अनुभूतिहीन मन से निकले
थोथे गीत नहीं गाने हैं !
.
• •
(238) मंज़िल कहाँ ?
.
है अभी मंज़िल कहाँ ?
.
चल रहा हूँ राह पर अभिनव लिए विश्वास,
लक्ष्य का मिलता कहीं किंचित नहीं आभास,
द्रौपदी के चीर-सा यह बढ़ रहा है पथ,
इति कहाँ ? बीता नहीं दुर्गम अभी तक अथ,
छोर क्या ? आँचल कहाँ ?
है अभी मंज़िल कहाँ ?
.
रात के घनघोर तम में हिल रहे हैं पेड़,
भूत-सी लगती विजन में मृत्तिका की मेड़
विश्व को उल्लू भयंकर शाप लाया है,
रात रानी-कोप का क्षण पास आया है,
स्नेह के बादल कहाँ ?
है अभी मंज़िल कहाँ ?
.
जूझना है, जो खड़ी हैं सामने चट्टान,
और करना है नये युग का सबल निर्माण,
दूर जाना है, अथक साहस चरण के बल,
ज्योति-अंतर की जगाकर वेग से अविरल,

चाँद का संबल कहाँ ?
है अभी मंज़िल कहाँ ?

.

•   •

(239) पिछड़े हुए राष्ट्र से

.

पिछडे हुए हो तुम
बढ़ो, आगे बढ़ो
जब बढ़ रहा संसार !
नव विश्वास,
नूतन ध्येय संस्कृति का,
अमर वरदान युग का
मुक्ति का, स्वातन्त्र्य का,
दृढ शक्ति का,
उत्सर्ग का !
नूतन प्रगति-पथ पर
सबल रथ
तीव्र गति से राह समतल कर रहे हैं,
पंथ को अवरुद्ध करते
दीर्घतम पाषाण औ'
फिसलन भरी भारी शिलाएँ,
घोर प्रतिद्वन्द्वी हवाएँ
दृप्त चरणों से दबाते जा रहे हैं !
टैंक जैसी
विश्व की बढ़ती हुईं
करती हुईं मुठभेड़ अभिनव शक्तियाँ
जब बढ़ रही हैं
गढ़ रही हैं
गान गा स्वातन्त्र्य का;
पद-चिन्ह उनके देखकर
इतिहास के विद्रोह पृष्ठों में,
बढ़ो, तुम भी बढ़ो !
परतंत्रता की बेड़ियों को तोड़कर
अज्ञानता की रूढ़ियों को तोड़कर
प्राचीन गौरव-गान के
बंदी उठो, बंदी उठो !
तुम भी प्रगतिमय शीघ्र होकर
विश्व के मुख पर दिखो,
देदीप्य बन नक्षत्र-से चमको !
सजग हो
उठ पड़ो ओ, राष्ट्र सोये,
आज तो हुंकार कर,
ललकार कर !

.

युग-क्षितिज पर जब
रक्त जैसी लाल आभा छा रही है,
चेतना जीवन

प्रभाती चिन्ह स्वर्णिम रश्मियों के
आज पृथ्वी पर पड़े हैं,
देख जिनको विश्व सारा जग गया है
और तुम सो ही रहे हो ?
जग उठो तुम, जग उठो
जब जग गया संसार !
हो पिछड़े हुए
आगे बढ़ो, आगे बढ़ो
जब बढ़ गया संसार !
.
• •

(240) ज़िन्दगी की शाम

.
यह उदासी से भरी
मजबूर, बोझिल
ज़िन्दगी की शाम !
अपमानित
दुखी, बेचैन युग-उर की
तड़पती ज़िन्दगी की शाम !
.
मटमैले, तिमिर-आच्छन्न, धूमिल
नीलवर्णी क्षितिज पर
आहत, करुण, घायल, शिथिल
टूटे हुए कुछ पक्षियों के पंख
प्रतिपल फड़फड़ाते !
नापते सीमा गगन की दूर,
जिनका हो गया तन चूर !
.
धुँधला चाँद
शोभाहीन
कुछ सकुचा हुआ-सा झाँकता है,
हो गया मुखड़ा
धरा को देखकर फीका,
सफ़ेदी से गया बीता,
कि हो आलोक से रीता !
गया रुक एक क्षण को
राह में सिर धुन पवन
.
सम्मुख धरा पर देख
जर्जर फूस की कुटियाँ
पड़ीं जो तोड़ती-सी दम,
घिरा जिनमें युगों का सघन-तम !
और जिनमें
हाँफ़ती-सी, टूटती-सी
साँस का साथी पड़ा है
हड्डियों को ढेर-सा मानव,
बना शव !

मौनता जिसकी अखंडित,
धड़कता दुर्बल हृदय
अन्याय-अत्याचार के
अगणित प्रहारों से दमित !
अभिशाप-ज्वाला का जला,
निर्मम व्यथा से जो दला
जिसको सदा मृत-नाश का
परिचय मिला !
जो दुर्दशा का पात्रा,
भागी, कटु हलाहल घूँट जीवन का
मरण-अभिसार का
निर्जन भयानक पंथ का राही
थका, प्यासा, बुभुक्षित !
.
कह रहा है सृष्टि का कण-कण —
‘मनुजता का पतन’ !
असहाय हो निरुपाय
मानवता गिरी,
अवसाद के काले घने
अवसान को देते निमंत्रण
बादलों में मनु-मनुजता आ घिरी !
उद्यत हुआ मानव
बिना संकोच, जोकों-सा बना,
मानव रुधिर का पान करने !
क्रूरतम तसवीर है,
है क्रूरतम जिसकी हँसी
विष की बुझी !
.
पर,
दब सकी क्या मुक्त मानवता ?
सजग जीवन सबल ?
यह दानवी-पंजा
अभी पल में झुकेगा,
और मुड़ कर टूट जाएगा !
मनुजता क्रुद्ध हो
जब उठ खड़ी होगी
दबा देगी गला
चाहे बना हो तेज़ छुरियों से !
सबल हुंकार से उसकी
सजग हो डोल जाएगी धरा,
जिस पर बना है
भव्य, वैभव-पूर्ण
इकतरफ़ा महल
(पर, क्षीण, जर्जर और मरणोन्मुख !)
अभी लुंठित दिखेगा,
और हर पत्थर चटख कर
ध्वंस, बर्बरता, विषमता की

कथा युग को सुनाएगा !
जलियानवाला-बाग़-सम
मृत-आत्माओं की
धरा पर लोटती है आबरू फिर;
क्योंकि गोली से भयंकर
फाड़ डाले हैं चरण
दृढ़ स्वाभिमानी शीश
उन्नत माथ !
जिन पर छा गयी
सर्वस्व के उत्सर्ग की
अद्भुत शहीदी आग,
उसमें भस्म होगा
ध्वस्त होगा राज तेरा
ज़्ाुल्म का, अन्याय का पर्याय !
.
पर, यह ज़िन्दगी की शाम —
अगणित अश्रु-मुक्ताओं भरी,
मानों कि जग-मुख पर
गये छा ओस के कण !
चाहिए दिनकर
कि जो आकर सुखा दे
पोंछ ले सारे अवनि के
प्यार से आँसू सजल।
जिससे खिले भू स्त
जीवन की चमक लेकर,
चमक ऐसी कि जिससे
प्रज्वलित हों सब दिशाएँ,
जागरण हो,
जन-समुन्दर हर्ष-लहरों से
सिहर कर गा उठे
अभिनव प्रभाती गान,
वेदों की ऋचाओं के सदृश !
बज उठे युग-मन मधुर वीणा
जिसे सुन जग उठें
सोयी हुईं जन-आत्माएँ !
और कवि का गीत
जीवन-कर्म की दृढ़ प्रेरणा दे,
प्राण को नव-शक्ति
नूतन चेतना दे !
.
• •
(241) ज़िन्दगी
.
ज़िन्दगी —
एक ढर्रे की बनी,
हर घड़ी अभिशापिनी,
सदियों-सी बड़ी

किस काम की
जब नहीं है सनसनी ?
.
एकरस औ' एक स्वर
गूँजता प्रत्येक घर !
.
बोझ से जीवन हुआ भारी
क्या यही है युक्त तैयारी ?
.
कि धारा राह में ठहरी
व छायी भूत-सी
इस छोर से उस छोर तक
सुनसान-सी बीहड़ उदासी
मौत की गहरी;
कि फैली है
हृदय में रे
सड़ी-सी लाश की बदबू,
कि गन्दगी ऐसी
कि सारी ज़िन्दगी दूभर
रुक गयी थककर !
नहीं है
आज की यह ज़िन्दगी
इन्सान की अपनी सगी !
छिः, यह ज़िन्दगी !
.
(242) शिशिर प्रभंजन
.
शीत ऋतु
तलवार की कटु धार-सा
चलता पवन !
निर्जन गगन में
घन कहीं कड़का,
कहीं पर काँपती करका !
सघन तम,
बरसता है मेह
दलदल राह में
चंचल बड़े जल-स्रोत
सारे खेत हैं जल-मग्न !
.
कुटियाँ भग्न-खंडित,
थरथराता वायुमंडल
विश्व-प्रांगण मध्य हलचल —
गाय बकरी भैंस - पशु,
जन - वृद्ध, शिशु, रोगी, तरुण,
भू तरल पर
पेट में घुटने गड़ाये
सिहरते

केश भूतों-से बिखेरे
वेष भिक्षुक-सा बनाये
काटते भीषण अभावों की
करुण युग-रात्रि क्षण-क्षण,
सह रहे बर्बर-नरक सम यातनाएँ !
दुःख दाहक पा कभी रोते
कृशित-तन नग्न मरणासन्न शिशु
तब विश्व की
दुर्गन्ध सारी गंदगी से युक्त
आँचल को उठा कर
शुष्क स्तन पर नारियाँ
शोषण करातीं खून का !
.
है क्या यही विद्रोह की स्थिति ?
भर गया अब
कष्ट के दुर्दम पवन से
क्रूरता अन्याय का बैलून !
निश्चय —
पास है विस्फोट का क्षण,
दे रहा प्रति पल
यही संकेत !
आवाहन
जगत में क्रांति का अब
हो रहा मुखरित निरंतर !
चल पड़ी है
दूर से आँधी भयंकर
जन-विजय की कामना भर !
.
बेड़ियाँ परतंत्रता की
और कड़ियाँ हर तरह की
झनझनातीं टूटने को,
हर दमित अब छूटने को !
दे रहा दृढ़ स्वर सुनायी
मुक्त नवयुग के प्रखर संदेश का,
है प्रतिचरण
नव क्रांति-पथ पर
नव-सृजन की नींव का
मज़बूत पत्थर !
चल रहा क्रम
भ्रम न किंचित
गिर रहा आकाश से हिम,
आ रहा देता निमंत्रण
शीत का सन्-सन् प्रभंजन !
.
(243) नया विश्वास
.
बर्फ़ की इन आँधियों में

आश की चिनगारियाँ कब तक जलेंगी ?
चिनगारियाँ:
जिन पर रहीं बिछ
राख की परतें जलीं !
रे और कब तक
उर-सुलगती ज्वाल जीवन की रहेगी ?
काँपतीं रवि-रश्मियाँ नभ से चलीं,
अति शीत लहरों से
रही घिर रात जीवन की घनी !
.
रात —
जो बढ़ती गयी प्रतिपल
सती उस द्रौपदी के चीर-सी;
बात ठंडी है सभी
हिम-नीर-सी !
.
विश्वास —
पीले पत्र-सा
रे झुक गया है हार कर,
अब और कब-तक व्योम की छत
प्राण की रक्षा करेगी ?
ओट आँचल की कहाँ तक
मत्त तूफ़ानी घड़ी में
दीप अन्तर का बचाये रह सकेगी ?
बुझ न जाये;
क्योंकि बाक़ी है
अभी तो स्नेह,
क्या वह स्नेह
यों ही व्यर्थ जाएगा ?
.
नहीं !
अविरल जलेगा वह
प्रलय तक
और अंतिम बूँद तक,
हर श्वास तक,
जग उलझनों में !
दीप जीवन का प्रखर
हर क्षण
रखेगा ज्योति में डूबा हुआ !
.
चिनगारियाँ हैं :
बर्फ़ से — हिम नीर से
ये बुझ न पाएंगी कभी,
आँधियों से तो
जलेंगी और ऊँची बन
गगन में तीव्र लपटों-सी !
न सोचो —

दीप यह यों ही बुझेगा,
न सोचो —
थक गया है
ज्वार सागर का उमड़ता;
देख लेना
कल उठेगा बाँधने को व्योम को फिर !
क्योंकि
मेरी बाहुओं में
शक्ति बनती और बढ़ती जा रही है,
क्योंकि
अंतर-बल सतत
आती हुई हर साँस पर बेचैन है !
रह-रह
नया विश्वास जीवन में
उभरता जा रहा है !
बर्फ़ की इन आँधियों में
आदमी
बेख़ौफ़ सरगम गा रहा है !
.
(244) ध्वंस और सृष्टि
.
ध्वंस की आँधी चली है,
मौत की घंटी बजी है !
चीत्कारें
दुख भरी व्याकुल पुकारें !
रक्त की नदियाँ;
बहीं बन लाश की लड़ियाँ भयंकर !
नाश की घड़ियाँ गरजती आ रही हैं !
विश्व के भू-खंड के प्रत्येक कण-कण से
जहाँ भी टारनेडो-वेग भर
ज्वाला बढ़ी है;
और आगे साध साधे
क्रूर बढ़ती जा रही है
दृश्य पुनरावृत्ति !
अग्नि की धू-धू शिखाओं से
जली है पूर्ण मानवता !
कि गूँजा जग कराहों से
कि चीखे जन —
'बचाओ रे, बचाओ रे !
प्रलय की अग्नि से आहत
मरण की कल्पना से डर
प्रखर स्वर बोलते करुणा भरे —
'हा, हा बचाओ रे !'
.
कि गरजे ज़ोर से बादल,
कि बरसे ज़ोर से बादल,
जगत में मच रही हलचल !

.

नयी दुनिया
बनाएंगे, बसाएंगे !
उजड़ती बस्तियाँ हैं तो
उजड़ने दो,
नये युग के लिए
बलिदान होने दो !
अशिव कर दूर — दानवता मिटा,
फिर से
नयी दुनिया बसाएंगे !
नया भूतल उठाएंगे !
बहा देंगे
समुन्दर प्रेम का,
समता, प्रगति, स्वातंत्रय का चहुँ ओर !
आये मेघ जीवन के
गरजते घोर !

.

(245) मेरे हिन्द की संतान

.

मेरे हिन्द की संतान !
तेरे नेत्र हों द्युतिमान
तेरे मुक्त, बल से युक्त,
विद्युत से चरण गतिमान !
मेरे हिन्द की संतान !

.

भूखी नग्न शोषित त्रास्त
तेरी भग्न जर्जर देह नत
प्राचीनता के
डगमगाते जीर्ण चरणों पर,
कि हालत आज है बेहद बुरी
मानो कसाई की छुरी से चोट खा
बेचैन हो चिल्ला उठा बकरा,
दमित यह सर्वहारा वर्ग
कितना रे गया गुज़रा !
करोड़ों मूक श्रमजीवी
उठो,
प्रतिशोध लो नूतन सबेरे में,
तुम्हारे देश के
उन्मुक्त विस्तृत वायुमंडल में
नयी किरणें
लगीं गिरने !
कि मुट्ठी बाँध कर गाओ
नया स्वाधीनता का गान !
मेरे हिन्द की संतान !

.

हर सोया हुआ इन्सान
करवट ले उठा,

जागा,
कि जिसको आततायी देख
उलटे पैर ले भागा,
जगे हैं सिंह निद्रा से !
मिटा पापी अँधेरा अब।
.
'ठहर जा ओ अरे हिंसक !
कुचलता हूँ
अभी मैं शीश यह तेरा,
कि बस अब डाल दो घेरा !'
सभी ने यों पुकारा है !
.
करोड़ों के चरण फौलाद-से
अन्याय की चट्टान से जूझे,
किसी को आज क्या सूझे ?
असत् सत् का
चमक तम का
हुआ अभियान !
खड़ी हो जा
गठीली स्वस्थ फैली मुक्त छाती तान !
मेरे हिन्द की संतान !
.
(246) स्नेह की वर्षा
.
मेरे स्नेह की वर्षा !
नहा लो
त्रास्त प्राणों के उबलते ज्वार,
कर लो शांत जीवन के
धधकते लाल सब अंगार !
मेरे प्यार की वर्षा !
.
घुमड़ कर हिन्द सागर से
सजल बादल
घिरे नभ के किनारों तक,
बढ़े शीतल पवन के साथ
करने शक्ति भर दृढ़ वार,
ऊँचे दुःख से निर्मित
हिमालय से बने पर्वत !
अभागे देश के ऊपर
कि मूसलधार जल-वर्षा !
नहा लो
त्रास्त प्राणों के उबलते ज्वार,
मेरे स्नेह की वर्षा !
.
उठी हैं अग्नि की लपटें प्रखर
है सिन्धु-गंगा भूमि उर्वर
बंग श्यामल कुंतला धरणी

झुलस आहत
गगन से याचना कर आज
जीवन माँगती है
नाश-सीमा पर खड़ी होकर !
तुम्हारे बिन्दु दो केवल
हिला शव को जगा देंगे,
बरस लो आज
देकर पूर्ण अपने स्नेह-कण
निर्मल, सजल, कोमल !
सरल अनुराग की वर्षा !
कि मूसलधार जल-वर्षा !
नहा लो
आज जीवन के
मलिन सब भाव धो डालो !
युगों से त्रस्त
पीड़ा ग्रस्त
मेरे देश के मानव !
सहे तुमने
अनेकों युग दमन के,
वेदना निर्मम जलन के,
आग में झोंके गये
तृण से जले,
अपमान क्या ?
सब लूट कर भी ले गये
कटु आततायी क्रूर,
हँसते व्यंग्य से हो दूर !
जिनने कर दिया है
देश की प्रत्येक जर्जर झोंपड़ी का
चोट से प्रति अंग चकनाचूर !
मेरे स्नेह की वर्षा,
नहा लो
त्रास्त प्राणों के उबलते ज्वार !
मेरे प्यार की वर्षा,
मेरे स्नेह की वर्षा !
•   •

(247) बदलो!

.

अपने पथ को बदलो,
बदलो !

.

चिर-प्राचीन विषम
मग के प्रेमी
विश्वासी
रूढि-ग्रस्त,
बदलो
अपने पथ को बदलो !

.

अभ्यस्त चरण
बढ़ जाते हैं राह बनी पर
भेड़ सरीखे,
नूतन-पथ का आज सुनो
नव आवाहन,
जीवन का स्वर !
उन्नति प्रगति निरन्तर,
निर्भय सुदृढ़ अथक
अपराजित !
.
बदलो
अपने पथ को बदलो !
.
(248) जन-रव
.
आलोकित विस्तृत जन पथ !
खड़े हुए विद्युत-गतिमय
युग के जिस पर नूतन रथ !
प्रस्तुत,
शक्ति सुसज्जित !
मन्वन्तर कर
नव संस्कृति निर्मिति हित।
प्रेरक स्वर
उन्मुक्त प्रखर अविजित,
गूँज रहा जन-रव
जन पथ पर जन-रव !
.
मानव —
दुर्दम इस्पाती अडिग सबल
चरणों के बल
क़दम-क़दम पर
दे नव-आवाहन
.
चीर रहा छाये
उच्छृंखल अर्थ-व्यवस्था के घन।
उपचार समाजी घावों का कर,
परिवर्तित आनन्दित
वसुधा को कर !
सुख-सम्पन्न सभी
धन-अन्न समस्त जनांे को दे,
करने प्रतिपादित
नयी सभ्यता, दर्शन अभिनव।
जनयुग का
संयमित सबल जन-रव !
.
(249) पहली बार
.

विश्व के इतिहास में
जनता सबल बन
आज पहली बार जागी है,
कि पहली बार बाग़ी है !
.
पुरानी लीक से हटकर
बड़ी मज़बूत चट्टानी रुकावट का
प्रबलतम धार से कर सामना डट कर,
विरल निर्जन कँटीली भूमि पथरीली
विलग कर, पार कर
जन-धार उतरी
मानवी जीवन धरातल पर
सहज अनुभूति अंतस-प्रेरणा बल पर !
.
कि पहली बार छायी हैं
लताएँ रंग-बिरँगी ये
कि जिनकी डालियों पर
देश की संकीर्ण रेखाएँ
सभी तो आज धुँधली हैं !
क्योंकि
अंतर में सभी के
एक से ही दर्द की
व्याकुल दहकती लाल चिनगारी
नवीना सृष्टि रचने की प्रलयकारी !
.
क़दम की एकता यह आज पहली है,
तभी तो हर विरोधी चोट सह ली है !
.
गुज़र गये हैं
हहरते क्रुद्ध भीषण अग्नि के तूफ़ान
जिनका था नहीं अनुमान
सभी के स्वत्व के संघर्ष में युग-व्यस्त
भावी वर्ष-सम साधक
भुवन प्रत्येक जन-अधिकार का रक्षक !
.
केलीफ़ोर्निया की मृत्यु-घाटी से,
कलाहारी, सहारा, हब्स, टण्ड्रा से
मिटी अज्ञान की गहरी निशा,
ज्योतित नये आलोक से रे हर दिशा !
निर्माण हित उन्मुख जगत जनता
.
विविध रूपा
विविध समुदाय
बैठा अब नहीं निरुपाय
उसको मिल गया
सुख-स्वर्ग का नव मंत्र
मुक्त स्वतंत्र !

.

उसका विश्व सारा आज अपना है,

नहीं उसके लिए कोई पराया, दूर सपना है !

.

युगान्तर पूर्व युग-जीवन विसर्जन

दृढ़ अटल विश्वास के सम्मुख सभी

अन्याय पोषित भावनाओं का

हुआ अविलम्ब निर्वासन !

.

बुझते दीप फिर से आज जलते हैं,

कि युग के स्नेह को पाकर

लहर कर मुक्त बलते हैं !

.

सघन जीवन-निशा विद्युत लिये

मानों अँधेरे में बटोही जा रहा हो टॉर्च ले

जब-जब करें डगमग चरण

तब-तब करे जगमग

उभरता लोक-जीवन मग !

.

कल्मष नष्ट,

पथ से भ्रष्ट!

.

दूर कर आतंक

नहीं हो नृप न कोई रंक !

.

अभी तक जो रहे युग-युग उपेक्षित

वे सँभल कर सुन रहे

विद्रोह की ललकार !

.

पहली बार है संसार का इतना बड़ा विस्तार,

कि पहली बार इतनी आज कुर्बानी अपार !

.

डा. महेंद्रभटनागर, 110 बलवन्तनगर, गांधी रोड, ग्वालियर — 474 002

[म.प्र.]

फ़ोन : 0751- 4092908 / मो. 98 93 40 97 93

[क्रमश:]